IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

# ड्रीम गर्ल: एक समीक्षा

डॉ.नीलिमा दुबे,
न्यु होराइज़न कॉलेज,बैंगलुरु

सबसे पहले आपबीती को विषय बनाकर सधी भाषा में अभिव्यक्त करना, बेहद साहस का कार्य है। यह काम आपने जिस ईमानदारी, मर्यादा व संवेदनशीलता से निभाया है। उस साहस और मनोभावों को मेरी और से हृदय से प्रणाम।

पुस्तक बेहद प्रशंसनीय है, एक शिक्षक के नाते मै अगर इस किताब में तलाशुं तो बहुत कुछ मिलता है। जैसे अपनी बात में स्पष्ट यह कह देना कि नाम बदलकर पात्रों को कहानी में रखना कितना कष्टकर है। उपन्यासकार बेबाकी के साथ यह स्पष्ट कर देता है कि लिखी घटनाओं का सीधा संबंध उसी से जुड़ा है। पाठक को उपन्यास से कनेक्ट करता है।

पांच खंडों में विभाजित यह उपन्यास कई मायनों में विशेष है। हर खंड का अपना सौंदर्य है।

खंड -1 नर्म युवामन की कल्पनाशीलता का स्वाभाविक पक्ष रखता है। जहां सच केवल एक ही होता है, येन केन प्रकारेण, गरमजोशी के साथ अपने सपनों को पूरा करना। खुशी की वजह हो न हो उसे क्रिएट कर लेना, एक जिंदादिली का एहसास कराता है।

खंड -2 से 4 - यहां से उपन्यास के नायक नायिका वास्तविक जीवन में कदम से रखते हैं। जहां एक साथ कई सच सामने आने लगते हैं। एक के बाद एक असफलताएं, लेकिन किसी न किसी तरह से दोनों का खुद को संभालना, समेटना, फिर आगे बढ़ना, निश्चित ही आज के किसी भी युवा के लिए मिसाल है।

सिद्धार्थ का एक तरफ सुलोचना का पक्ष संभालना, तो दूसरी ओर अपनी मदद करना, पाठकों को जहां एक परिपक्वता की और ले जाता है। अपने प्रेम की प्रतिष्ठा और गरिमा की खातिर , वास्तविकता से समझौता करना, नीलिमा की जिम्मेदारी के सहारे अपने सपने के करीब रहने की चाहत, सिद्धार्थ बखूबी निभाता है।

अंत में वह सच स्वीकारना जो एक प्रेमी हृदय कभी स्वीकार करना नहीं चाहता - विरह की पीड़ा। मन की यह सबसे भयानक स्थिति होती है। मनोविज्ञान में इसे काफी विस्तृत जगह मिली है। मगर हमारे समाज एवम् पारिवारिक ढांचे , मानों इनके करुण क्रंदन को सुनने के लिए बने ही नहीं है। जीवन के ऐसे पल सबसे कमजोर होते हैं। मगर सत्य को स्वीकार कर जैसे दोनों आगे बढ़ते हैं, यह जीवन के प्रायोगिक रूप को सामने लाता है।

खंड -5 को इस उपन्यास का अंतिम खंड कहना उचित नहीं होगा। इसे दोनों पात्रों के अगले अध्याय की भूमिका कहा जाना चाहिए। यही बात है कि यह भाग , पाठकों को बेहद पसंद आएगा। उपन्यासकार की खासियत है कि उन्होंने कहानी को वहां ख़तम नहीं किया, जहां आकर प्रायः भारतीय लेखक कलम रोक देते हैं। ये बात इस भाग को विशेष बनाती है।

महत्वपूर्ण यह नहीं है कि सुनयना सुलोचना के स्थान पर आ गई, महत्वपूर्ण यह है कि जिस माधुर्य से सिद्धार्थ ने सुनयना को स्वीकारा और सुनयना ने आते ही जिस गरिमा से उसे संभाला, एक अन्य मिसाल है। पूरे उपन्यास में एक गहरे से रूमानी एहसास मिलते हैं। खूबी यह है कि शब्दों की चीर फाड़ में कहीं भी विकृत नहीं हुए। अगर गहराई से देखा जाए तो लेखक ने प्रेम के उस रूप को सामने रखा है, जो श्रृंगार का सबसे श्रेष्ठ रूप माना जाता है, जिसमें प्यार के मायने भावना और आत्मा तक पैठ बना लेते हैं। जिसका सम्बन्ध शरीर और स्थान से नहीं होता।

21 वी सदी के लेखक से यह अपेक्षा लोग कम ही रखते हैं। इस उपन्यास के गीत भी वह कह देते हैं, जो शायद एक - दो पेज में लिखने से भी समझाया न जा सके। प्रथम गीत, जो चितवन देखी पहली बार....., से लेकर , अगर जाना ही था दूर, तो रूठकर यों न जाते, तक परिपक्वता दिखाई देती हैं।

कहीं अगर कुछ कमीं खलती है तो वह संवादों की है, संवादों का अभाव है । कुछ और संवाद होते तो इसके प्रभाव को और गहरा बना सकते थे। यह मेरा व्यक्तिगत मत है। शायद कम संवादों के पीछे भी लेखक की कोई सोच रही होगी, बस इतना ही.....।